भक्तिमय भजन संग्रह

प्राचीन कवियों व ज्ञानियों द्वारा विरचित
आध्यात्मिक भक्ति गीतों व स्तुतियों का
अनुपम संकलन

: प्रकाशक :
श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट
मुम्बई

प्रथम संस्करण :

भगवान महावीर मोक्ष कल्याणक दिवस के पावन अवसर पर प्रकाशित, कार्तिक कृष्ण अमावस्या १ नवम्बर २०२४ –

मुमुक्षुता की प्रगटता व भावना ही इस पुस्तक का मूल्य है।

अध्यात्म संजीवनी में समाहित गीत सभी प्रमुख AUDIO APP - Gaana, JioSaavan, Amazon Music, Spotify, Apple i-tune, Hungama, Google Music, Wynk Music, Youtube Music आदि पर निःशुल्क उपलब्ध है।

प्राप्ति स्थान :

श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट
302, कृष्णकुंज, प्लॉट नं. 30, नवयुग सीएचएस लि.
वी.एल.मेहता मार्ग, विले पार्ले (पश्चिम), मुम्बई 400056
website : www.vitragvani.com, **e-mail:** info@vitragvani.com

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट
सोनगढ़ (सौराष्ट) 364250, फोन : 02846 244334, 244358
website : www.kanjiswami.org, **e-mail** : contact@kanjiswami.org

तीर्थधाम मंगलायतन
अलीगढ़-सासनी मार्ग, सासनी-204216 (हाथरस), उत्तरप्रदेश
मोबा. 9997996346, 9756633800
Website : www.mangalayatan.com; **e-mail :** info@mangalayatan.com

पंडित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापू नगर, जयपुर - 302015
फोन. 0141 2707458, 2705581
Website : www.ptst.in, **e-mail :** info@ptst.in

अहो भाव

वीतरागी देव-शास्त्र-गुरू इस पवित्र जैन शासन के मूल आधार हैं। धर्मी श्रावकों को इनके प्रति सहज ही परम उत्कृष्ट अहोभाव आता है। जिनधर्म के प्रति अपूर्व भावना से प्रेरित होकर हजारों वर्षों से प्राकृत, संस्कृत और वर्तमान में हिन्दी तथा अन्य प्रचलित देशीय भाषाओं में अनेक ज्ञानियों व आत्मार्थी कवियों ने आध्यात्मिक भक्ति साहित्य की रचना की है। इन कवि रत्नों में कविवर दौलतरामजी, ब्र.रविद्रजी, श्री भूधरदासजी, श्री भागचन्दजी, श्री बुधजनजी, श्री द्यानतरायजी आदि द्वारा प्रसूत ये सभी भक्तियाँ भेदविज्ञान, वीतरागता व वैराग्य रस से सराबोर हैं। इन्हीं कवियों के भक्ति उपवन में से कुछ उत्कृष्ट भक्ति पुष्पों का संकलन यहाँ **अध्यात्म संजीवनी** के रूप में निबद्ध कर प्रस्तुत किया जा रहा है; अतः सर्वप्रथम हम उन सभी ज्ञानी कवियों के प्रति अपनी श्रद्धा सुमन समर्पित करते है।

इन आध्यात्मिक पदों को आत्मार्थी भव्य जीवों की आत्मरूचि पुष्ट करने, चिरकाल तक सुरक्षित रखने एवं आगामी पीढ़ी तक पहुँचाने की पवित्र भावना से ही **श्री कुन्दकुन्द्रकहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई** के द्वारा यह प्रयास किया गया है। आशा है कि आत्मार्थीजन इस अध्यात्म भक्ति अमृत का रसपान कर ज्ञान और वैराग्य की प्रेरणा लेंगे तथा इन भक्ति गीतों में समाहित भावों को समझकर निज स्वाध्याय में वृद्धि करेंगें।

प्रस्तुत अध्यात्म संजीवनी में ख्याति प्राप्त संगीतकार एवं गायक अलाप देसाई, आसित देसाई तथा सुरेश जोशी द्वारा संगीत की मधुर लहरियाँ तथा देश के कई प्रसिद्ध गायक कलाकारों द्वारा स्वर लहरियाँ प्रदान की गई हैं; अतः हम उन सभी कलाकारों व सहयोगीयों के प्रति भी अपना हार्दिक आभार व्यक्त करते है।

- श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, विले पार्ले, मुम्बई

अनुक्रमणिका

एलबम–9 अध्यात्म संजीवनी (भाग–9)

			पेज नं.
1.	तोरे दर्शन सो	–	47
2.	अरहन्त सुमन मन बावरे	–	48
3.	जिनवाणी माता रत्नत्रय	–	49
4.	गुरु समान दाता नहीं कोई	–	51
5.	अहो चैतन्य आनन्दमय	–	52
6.	भाई ! कहा देख गरवाना रे	–	53
7.	आया कहां से, कहाँ है जाना ?	–	55
8.	भजन बिन यों ही जनम गंवायो	–	57
9.	अहो ! यह उपदेश मांही	–	58
10.	असंख्यात प्रदेश जाके	–	59

अध्यात्म संजीवनी

भाग –9

1

तोरे दर्शन सों

तोरे दर्शन सों, मेरो मनुवा अति हर्षाय ।।
शान्त छवि लखि शान्त भाव है, आकुलता मिट जाय।
तोरे दर्शन सों, मेरो मनुवा अति हर्षाय ।।टेक॥

जबलौं चरण निकट नहिं आया, तबलौं आकुलता थाय ।
अब आवत ही निज निधि पाया, नित नव मंगल पाय ।।1॥
तोरे दर्शन सों, मेरो मनुवा अति हर्षाय ।।टेक॥

'बुधजन' अर्ज करै कर जोरे, सुनिये श्री जिनराय ।
जबलौं मोक्ष होय नहिं तबलौं, भक्ति करूं गुण गाय ।।2॥
तोरे दर्शन सो, मेरो मनुवा अति हर्षाय ।

हे प्रभु! आपके दर्शन करसे मेरा मन अत्यंत प्रसन्न हो जाता है, आपकी शांत छवि देखकर मेरे परिणाम शांत हो जाते हैं और आकुलता का अंत हो जाता है। हे प्रभु! आपके दर्शन से मेरा मन अत्यंत प्रसन्न हो जाता है॥टेक॥

जब तक मैंने आपके चरणों की शरण प्राप्त नहीं की थी, तब तक मुझे आकुलता हो रही थी और अब जैसे ही मैंने आपके चरणों का सानिध्य पाया तो ऐसा लगा कि मानो मुझे अपनी आत्मा की निधि प्राप्त हो गई है और मुझे हर समय मंगल ही भासित होता है॥1॥

कविवर बुधजनजी कहते हैं कि हे जिनदेव! मैं हाथ जोड़कर आपसे प्रार्थना करता हूँ, कृपया मेरी प्रार्थना सुनिए। मेरी यही भावना है कि जब तक मुझे मोक्ष प्राप्त न हो तब तक मैं आपकी भक्ति व गुणगान करता रहूँ॥2॥

2 अरहन्त सुमर मन बावरे....

अरहन्त सुमर मन बावरे ।।
ख्याति लाभ पूजा तजि भाई, अन्तर प्रभु लौ लावरे ।।
अरहन्त सुमर मन बावरे ।।टेक ॥

नरभव पाय अकारथ खोवै, विषय भोग जु बढ़ाव रे।
प्राण गये पछितैं है मनुवा, क्षण क्षण छीजै आयु रे ।।1॥
अरहन्त सुमर मन बावरे ।।

युवती तन धन सुत मित परिजन, गज तुरंग रथ चाव रे।
यह संसार स्वपन की माया, आँख मीच बिखराव रे ।।2॥
अरहन्त सुमर मन बावरे ।

ध्याय ध्याय रे अब है अवसर, आतम मंगल गाव रे।
'द्यानत' बहुत कहाँ लौं कहिये, और न कछु उपाव रे ।।3॥
अरहन्त सुमर मन बावरे ।

ए मेरे बावरे मन! अरे मेरे नादान मन! तू अरिहंत के गुणों का स्मरण कर। लाभ और सम्मान की भावना छोड़कर अरे भाई! तू अपने अंतर को अर्थात् मन को प्रभु से जोड़ ले, अंतर में प्रभु की लगन लगा ले, प्रभु की दीपक लौ से अपने को जोड़ ले, एक कर ले अर्थात आत्म स्वरूप में रुचि पूर्वक लीन हो जा॥टेक॥

तू यह मनुष्य जन्म पाकर भी इसे व्यर्थ ही खो रहा है। तू विषय भोग में ही अपने आप को लगाए हुए हैं, उसमें ही वृद्धिंगत है। इस बहुमूल्य आयु का एक-एक क्षण व्यतीत होता जा रहा है अर्थात् मृत्यु समीप आती जा रही है, यदि नही संभला तब जीवन के अंत समय में फिर पछताना होगा॥1॥

स्त्री, शरीर, धन, पुत्र, मित्र, परिवारजन, हाथी, घोड़े, रथ इत्यादि जड द्रव्यों के प्रति तेरी रुचि है। यह संसार तो स्वप्न के समान है, अस्थिर है। आंख बंद करने पर जैसे दिखाई देता है वैसे ही यह काल्पनिक संसार शून्य दिखाई देता है॥2॥

अरे! अब तू आत्मा का ध्यान कर। अभी अवसर है, ऐसा मंगल अवसर फिर प्राप्त नहीं होगा। कविवर द्यानतरायजी कहते हैं कि अधिक क्या कहा जाए? अरे फिर कोई उपाय शेष नहीं बचेगा। हे चंचल मन! अरहंत प्रभु का नाम स्मरण कर॥3॥

3 जिनवाणी माता रत्नत्रय...

जिनवाणी माता रत्नत्रय निधि दीजिये ॥ टेक ॥
मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चरण से, काल अनादि घूमे।
सम्यग्दर्शन भयौ न तातै दुःख पायो दिन दूने ॥ 1
जिनवाणी. . ॥
है अभिलाषा सम्यग्दर्शन - ज्ञान - चरण दे माता ।
हम पावैं निजस्वरूप आपनों, क्यों न बनै गुण ज्ञाता ॥2॥
जिनवाणी. . ॥
जीव अनन्तानन्त पठाये स्वर्ग मोक्ष में तूने ।
अब बारी है हम जीवन की, होवे कर्म विदूने ॥3 ॥
जिनवाणी. . ॥
भव्य जीव है पुत्र तुम्हारे, चहुँगति दुःख से हारे ।
इनको जिनवर बना शीघ्र अब, दे दे गुण गण सारे ॥4॥
जिनवाणी. . ॥
औगुण तो अनेक होत है, बालक में ही माता ।
पैं अब तुमसी माता पाई, क्यों न बनें गुण ज्ञाता ॥5॥
जिनवाणी. . ॥

हे जिनवाणी माता! मुझे रत्नत्रय रूपी निधि प्रदान करो।।टेक॥

मैं मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र के कारण अनादिकाल से संसार में घूम रहा हूँ और सम्यक दर्शन के बिना हर दिन दुगने-दुगने दु:ख प्राप्त करता रहा हूँ अर्थात इन दु:खों में मात्र वृद्धि ही हो रही है, हानि नही॥1॥

हे जिनवाणी माता! मेरी यही भावना है कि आप मुझे सम्यक्-दर्शन, सम्यक्-ज्ञान, सम्यक्-चारित्र प्रदान करें अर्थात मुझे रत्नत्रय की प्राप्ति हो। अपने स्वरूप की प्राप्ति कर हम अपने आत्म गुणों को पहचानें॥2॥

हे जिनवाणी माता! तुमने अनंत जीवों को स्वर्ग और मोक्ष प्रदान किया है। अब हमारी बारी है कि हम भी कर्मों को नष्टकर सिद्ध पद की प्राप्ति करें॥3॥

हे जिनवाणी माता! भव्य जीव तुम्हारे पुत्र हैं, जो चार गतियों के दु:ख से थक गए हैं अर्थात विरक्त हैं इसलिए इनको अतिशीघ्र आत्म गुणों का ज्ञान कराकर, जिनेंद्र परमात्मा बना दो॥4॥

हे जिनवाणी माता! बालकों में तो अनेक अवगुण होते हैं लेकिन तुम जैसी माता को पाकर हम अपने गुणों को क्यों ना जानें अर्थात् हमें अपने आत्म गुणों को पहचानना चाहिए॥5॥

4 गुरु समान दाता नहिं कोई...

गुरु समान दाता नहिं कोई
भानु–प्रकाश न नाशत जाको, सो अँधियारा डारै खोई ।।
गुरु. ।।

मेघ समान सबनपै बरसै, कछु इच्छा जाके नहिं होई।
नरक पशुगति आग मांहितैं, सुरग मुक्ति सुख थापै सोई ।।
गुरु. ।।1 ।।

तीन लोक मन्दिरमें जानौ, दीपक सम परकाशक–लोई ।
दीपतलै अँधियार भर्यो है, अन्तर बाहिर विमल है जोई ।।
गुरु. ।।2 ।।

तारन तरन जिहाज सुगुरु हैं, सब कुटुम्ब डोबै जगतोई ।
'द्यानत' निशिदिन निरमल मनमें, राखो गुरु–पद–पंकज दोई ।।
गुरु ।।3 ।।

हे आत्मन! गुरु के समान दाता अर्थात् देने वाला अन्य कोई नहीं है। अपने भीतर की मलिनता रूप अंधकार को जिसे सूर्य का प्रकाश भी नष्ट नहीं कर सकता उसे सच्चे गुरु सम्यग्ज्ञान के प्रकाश से नष्ट कर देते हैं॥टेक॥

जैसे बादल समान रूप से चारों ओर बारिश करता है और बरसने की उसकी कोई इच्छा नहीं होती वह स्वतः ही बरसता है वैसे ही सच्चे गुरु भव्य जीवों को नरक व पशुगति की आग से बाहर निकाल कर उन्हें स्वर्ग और मुक्ति के सुख में मात्र ज्ञानमात्र के द्वारा स्थापित करते हैं॥1॥

वे गुरु तीन लोक में दीपक के समान हैं अर्थात् श्रद्धा व विश्वास के केंद्र हैं। जिस प्रकार दीपक स्वयं जलकर अपने चारों ओर प्रकाश करता है किंतु उस लौकिक दीपक के तले तो अंधकार ही होता है; वहीं जब सच्चे गुरु तप करते हैं तब वे अंतर तथा बाह्य सब ओर से स्व-पर प्रकाशक होते हैं॥2॥

गुरु सम्यग्ज्ञान द्वारा संसार-सागर से पार उतारने के लिए जहाज के समान हैं जबकि सारा कुटुंब-परिवार तो संसार में डुबोने वाला है। कविवर द्यानतराय जी कहते हैं कि अपने मन को निर्मल कर उसमें ऐसे सच्चे गुरु के चरण कमल को सदा आसीन रखो अर्थात् उन्हें श्रद्धापूर्वक सदैव नमन करो॥3॥

5

अहो चैतन्य आनन्दमय

अहो चैतन्य आनन्दमय, सहज जीवन हमारा है।
अनादि अनंत पर निरपेक्ष, ध्रुव जीवन हमारा है ।। टेक ।।

हमारे में न कुछ पर का, हमारा भी नहीं पर में।
द्रव्य-दृष्टि हुई सच्ची, आज प्रत्यक्ष निहारा है ।।1 ।।

अनंतो शक्तियाँ उछलें, सहज सुख ज्ञानमय विलसें ।
अहो प्रभुता परम पावन, वीर्य का भी न पारा है ।।2।।

नहीं जन्मू नहीं मरता, नहीं घटता नहीं वढता,
अगुरुलघु रूप ध्रुव ज्ञायक, सहज जीवन हमारा है ।। 3 ।।

सहज ऐश्वर्य मय मुक्ति, अनंतो गुणमयी ऋद्धि ।
विलसती नित्य ही सिद्धि, सहज जीवन हमारा है ।।4।।

किसी से कुछ नहीं लेना, किसी को कुछ नहीं देना ।
अहो निश्चित परमानन्दमय, जीवन हमारा है ।।5।।

अहो! मेरा जीवन अत्यंत सहज और चैतन्य के आनंद स्वरूप वाला है। अनादि है, अनंत है, और पर की सहायता से रहित है और ध्रुव स्वरूपमय है॥टेक॥

हमारी आत्मा में कुछ भी अन्य द्रव्यों का नहीं है और हमारे चैतन्य का अंश मात्र भी अन्य द्रव्यों में नहीं है। हमारी दृष्टि आज चैतन्य को जानने वाली हुई है, यह हमने आज प्रत्यक्ष रूप से अवलोकन कर लिया है ॥1॥

मेरे चैतन्य स्वरूप में अनंत शक्तियाँ उछल रही हैं और यह सारी शक्तियाँ सहज, सुख, ज्ञानमय प्रतिभासित हो रही हैं। आज ऐसा लग रहा है कि मेरे चैतन्य की प्रभुता अत्यंत पवित्र है और मेरे उत्साह व पुरुषार्थ का भी आज पारावार नहीं है ॥2॥

मेरा कभी जन्म नहीं होता और न ही मैं कभी मरता हूँ। मैं कभी घटता नहीं ना ही बढ़ता हूँ, मैं ज्ञायक स्वभाव वाला हूँ, यही हमारा सहज जीवन है ॥3॥

मुझे प्रभुता संपन्न मुक्ति प्राप्त हो गई है और अनंत गुणमय ऋद्धियाँ प्राप्त हो गई हैं। ऐसा अनुभव हो रहा है कि मानो चैतन्य की सिद्धि हर पल शोभायमान हो रही है– यही हमारा सहज जीवन है ॥4॥

मुझे पर द्रव्यों से कुछ नहीं चाहिए और न ही किसी अन्य को मुझे कुछ देना है। हमारा जीवन अत्यंत निश्चित और परम आनंदमय और सहज है ॥5॥

5

अहो चैतन्य आनन्दमय

ज्ञानमय लोक है मेरा, ज्ञान ही रूप है मेरा।
परम निर्दोश समतामय, ज्ञान जीवन हमारा है॥6॥

मुक्ति मे व्यक्त है जैसा यहाँ, अव्यक्त है वैसा ।
अवद्धस्पृष्ट अनन्य, नियत जीवन हमारा है ।।7।।

सदा ही है न होता है, न जिसमें कुछ भी होता है।
अहो उत्पाद व्यय निरपेक्ष, ध्रुव जीवन हमारा है ।।8।।

विनाशी बाहा जीवन की, आज ममता तजी झूठी।
रहे चाहे अभी जाये, सहज जीवन हमारा है ।।9।।

नहीं परवाह अब जग की, नहीं है चाह शिवपद की ।
अहो परिपूर्ण निष्पृह ज्ञान, मय जीवन हमारा है ।।10।।

मेरा चैतन्य मुझे बस ज्ञान ही ज्ञानमय भासित होता है क्योंकि मेरा स्वभाव ज्ञानमय ही है। मेरा जीवन सभी दोषों से रहित समतामय और ज्ञान संपन्न है ॥6॥

मुझे आज ऐसा प्रतिभासित हो रहा है कि जिस तरह सिद्ध अवस्था में स्वरूप व्यक्त हो जाता है, बस उसी तरह यहाँ वह स्वरूप अव्यक्त है परन्तु आनंद सिद्धों जैसा ही है। मेरा स्वभाव किसी से बंधता नहीं, किसी को स्पर्श नहीं करता, किसी रूप नहीं होता और सदैव नियत अर्थात एक समान ही रहता है ॥7॥

मेरा स्वरूप अनादि काल से जैसे का तैसा है, इसमें कुछ नवीन नहीं होता, न ही कुछ इसमें व्यय होता है। मेरा चैतन्य स्वभाव उत्पाद- व्यय से रहित ध्रुव स्वभाव वाला है ॥8॥

आज मैंने पर द्रव्यों के प्रति झूठे ममत्व परिणाम को छोड़ दिया है, अब ये संयोग चाहे मेरे साथ रहें या चले जायें मुझे इसका कुछ भी दुःख नहीं है। मुझे अब संसार की कोई अटक नहीं है और न ही मुझे मोक्ष प्राप्ति की इच्छा है। अहो! मैं वर्तमान में परिपूर्ण हूँ, सभी इच्छाओं से रहित हूँ और मेरा जीवन ज्ञानमय है ॥9-10॥

6

भाई ! कहा देख गरवाना रे

भाई! कहा देख गरवाना रे
गहि अनन्त भव तैं दुख पायो, सो नहिं जात बखाना रे ।। भाई. ।।

माता रुधिर पिताके वीरज, तातैं तू उपजाना रे ।
गरभ वास नवमास सहे दुख, तल सिर पाँव उचाना रे ।। भाई. ।।1 ।।

मात अहार चिगल मुख निगल्यो, सो तू असन गहाना रे ।
जंती तार सुनार निकालै, सो दुख जनम सहाना रे ।। भाई. ।। 2 ।।

आठ पहर तन मलि मलि धोयो, पोष्यो रैन बिहाना रे ।
सो शरीर तेरे संग चल्यो नहिं, छिनमें खाक समाना रे ।। भाई. ।।3।।

जनमत नारी, बाढ़त भोजन, समरथ दरब नसाना रे ।
सो सुत तू अपनो कर जानै, अन्त जलावै प्राना रे ।। भाई. ।।4 ।।

देखत चित्त मिलाप हरै धन, मैथुन प्राण पलाना रे ।
सो नारी तेरी ह्वै कैसे, मूवें प्रेत प्रमाना रे ।। भाई. ।।5 ।।

पाँच चोर तेरे अन्दर पैठे, तें ठाना मित्राना रे ।
खाय पीय धन ज्ञान लूटके, दोष तेरे सिर ठाना रे ।। भाई ।।6 ।।

देव धरम गुरु रतन अमोलक, कर अन्तर सरधाना रे ।
'द्यानत' ब्रह्मज्ञान अनुभव करि, जो चाहे कल्याना रे ।। भाई ।।7 ।।

अरे भाई! क्या देखकर तुम इतना गर्व कर रहे हो ? अनंत भव धारण कर तुमने जो दुःख पाया है, उन दुःखों का वर्णन किया जाना संभव नहीं है ॥टेक॥

माता के रज, पिता के वीर्य से तेरी उत्पत्ति हुई। गर्भ में 9 महीने दुःख पाए, जहाँ सिर नीचे और पांव ऊपर किये रहे ॥1॥

गर्भवास में माता ने मुंह से चबाकर जो आहार निगला, वह भोजन ही तुझे खाने को मिला। जैसे सुनार जंत्री में तार खींचता है, जन्म के समय इस प्रकार गर्भ से तुझे बाहर निकाला, अनन्त वेदना तूने भोगी ॥2॥

आठों पहर इस शरीर की स्वच्छता के लिए बार-बार तन धोता रहता है और दिन-रात इसके पोषण में लगा रहता है। वह शरीर तेरे साथ नहीं चलता और क्षण मात्र में खाक में मिल जाता है ॥3॥

यह देह स्त्री के द्वारा उत्पन्न की जाती है, भोजन के द्वारा यह बढ़ती है, बड़ी होती है। तू जिस पुत्र को अपना जानता है वही तुझे, तेरी इस देह को अंत में जला देता है ॥4॥

स्त्री, जो देखते ही मन का हरण कर लेती है, उससे मिलाप होता है तो धन हर लेती है और मैथुन में शक्ति का हरण कर लेती है। तेरे मरते ही जो तुझे भूत के समान मानने लगती है, वह नारी तेरी कैसे हैं? ॥5॥

पांच चोर (इंद्रियाँ) तेरे भीतर बैठे हैं, उनसे तूने मित्रता कर रखी है वह खा-पीकर तेरे ज्ञान धन का नाश करके सारा दोष तेरे ही सिर मंढ़ देंगे ॥6॥

अरे! देव-गुरु-धर्म ये अनमोल रतन हैं। इनमें अंतरंग से श्रद्धा कर। द्यानतरायजी कहते हैं कि जो तू अपना कल्याण चाहता है तो ब्रह्म ज्ञान का अर्थात अपनी आत्मा का अनुभव कर ॥7॥

7

आया कहाँ से, कहाँ है जाना ?

आया कहाँ से, कहाँ है जाना ?
ढूंढ ले ठिकाना चेतन ! ढूंढ ले ठिकाना। सब कुछ तो जाना,
निज को न जाना ?
कैसा ज्ञानधारी तूने, आपा न पहचाना ।। टेक ।।

इक दिन तेरा गोरा तन ये, माटी में मिल जायेगा ।
कुटुम्ब कबीला खड़ा रहेगा, कोई बचा न पायेगा।
नहीं चलेगा, कोई वहाना, ढूंढ ले ठिकाना चेतन... ।।1 ।।

बाहर सुख को खोज रहा है, क्यों बनता दीवाना रे।
आतम ही सुख धाम है चेतन, निज को भूल न जाना रे।
सारे सुखों का ये है खजाना, ढूंढ ले ठिकाना चेतन... ।।2।।

जब तक तन में सांस है चलती, सब सुझको अपनायेंगे ।
जब न रहेंगे प्राण ये तन में, देख इसे घबड़ायेंगे ।
कहीं तो तुझको, पड़ेगा जाना, ढूंढ ले ठिकाना चेतन...।।3।।

धन दौलत और रूप खजाना, पड़ा यहीं रह जायेगा।
दौलत के दीवानों सुन लो, कुछ भी साथ न जायेगा।
आया अकेला, अकेले ही जाना, ढूंढ ले ठिकाना चेतन... ।।4।।

सद्गुरु जगा रहे हैं चेतन, सुन भव से तिर जायेगा ।
सम्यक्दर्शन ज्ञान से चेतन, दुःख सारा मिट जायेगा ।
सच्चे सुखों का यह है खजाना, ढूंढ ले ठिकाना चेतन....।।5।।

हे चेतन! तुम किस पर्याय से आए हो और तुम्हें किस पर्याय में जाना है ? तुम अनंत काल से भटक रहे हो, अब अपना स्थाई ठिकाना ढूंढ लो। तुमने सारी दुनिया को तो जाना परंतु अपनी आत्मा को नहीं जाना। तू कैसा ज्ञान स्वरूपी आत्मा है जो स्वयं की पहचान नहीं कर पाया ॥टेक॥

जिस शरीर पर तू इतना घमंड करता है तेरा यह गोरा शरीर एक दिन मिट्टी में मिलकर नष्ट हो जाएगा और सारा कुटुंब परिवार खड़ा होकर देखता रहेगा, परंतु कोई तुम्हें बचाने में समर्थ नहीं होगा। उस समय तेरा कोई बहाना काम नहीं आएगा इसलिए अपना स्थाई निवास ढूंढ ले ॥1॥

हे चेतन! तू पर द्रव्यों में ममत्व परिणाम करके उनमें ही सुख की खोज कर रहा है लेकिन तू यह नहीं जानतें कि तेरा आत्मा ही सुख का भंडार है इसलिए अपनी आत्मा को कभी नहीं भूलना, यह सारे सुख देने वाला है इसलिए अपना स्थाई ठिकाना ढूंढ ले ॥2॥

हे चेतन! जब तक इस शरीर में सांस चलती रहेगी तब तक परिवार कुटुंब वाले तुझसे प्रेम करेंगे परंतु जिस दिन इस शरीर से प्राण निकल जाएंगे उस दिन यही परिवार कुटुंब वाले इस मृतक शरीर को देखकर के घबराएंगे। हे चेतन! तुझे इस पर्याय के बाद कहीं तो जाना ही है इसलिए अपना शाश्वत स्थान ढूंढ ले। ॥3॥

हे चेतन! तू जिस धन दौलत और रूप पर घमंड करता हैं यह मृत्यु के बाद यहीं रह जाएगा। धन के पीछे अपना जीवन बरबाद करने वालो सुनो ! तुम्हारे साथ मृत्यु के बाद एक पैसा भी नहीं जाने वाला तुम अकेले ही आए हो और अकेले ही जाओगे इसलिए अपना स्थाई ठिकाना ढूंढ ले ॥4॥

हे चेतन! सच्चे गुरु हमें जगाने आए हैं तो यदि इनकी बात को सुनकर धारण करेगा तो संसार सागर से पार हो जाएगा और तुम सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान प्राप्त करोगे, इससे संसार का दुख समाप्त हो जाएगा। सच्चे सुख का रत्नत्रय ही मार्ग है इसलिए अपना स्थाई ठिकाना ढूंढ ले ॥5॥

8

भजन बिन यों ही जनम गंवायो

पानी पैल्या पाल न बांधी, फिर पीछैं पछतायो ।
भजन बिन यों ही जनम गंवायो ।टेक॥

रामा मोह भये दिन खोबत, आशा पाश बंधायो ।
जप तप संयम दान न दीनों, मानुष जन्म हरायो ।
भजन बिन यों ही जनम गंवायो ॥1॥

देह शीश जब कांपन लागी, दसन चलाचल थायो ।
लागी आग बुझावन कारन, चाहत कूप खुदायो ।
भजन बिन यों ही जनम गंवायो ॥2॥

काल अनादि गंवायो भ्रमता, कबहूँ न थिर चित ल्यायो ।
हरी, विषय सुख भरम भुलानो, मृग तृष्णा वश धायो ।
भजन बिन यों ही जनम गंवायो ॥3 ॥

हे आतमराम! तूने भक्ति के बिना अपना जीवन यूं ही बर्बाद कर दिया। तूने पानी (बाढ़) आने के पहले पाल (सीमा) नहीं बांधी और फिर बाद में पछताते रहे ॥टेक॥

हे आत्माराम! तुमने मोह के वश होकर अपने कई भव खराब कर लिए और इच्छा रूपी बंधन में बंधे रहे। तुमने जाप–तप, संयम आदि नहीं किया, दान नहीं दिया और मनुष्य जन्म को बर्बाद किया। तुमने भक्ति के बिना यूं ही जन्म को खो दिया ॥1॥

हे चेतन! जीवन के अंत में तुम्हारा शरीर और सर जब कांपने लगा और जब मृत्यु नजदीक आ गई फिर तू उपाय करता है मानो तुम आग लगने पर तुरंत ही कुआँ खोदकर उसके पानी से आग बुझाना चाहते हो। तुमने भगवान का गुणगान किये बिना यूं ही जन्म खो दिया है ॥2॥

हे चेतनराम! तुमने अपना अनंत काल संसार में भ्रमण करते हुए खो दिया और कभी भी आत्मा का ध्यान नहीं किया। जिस तरह जंगल में मृग, तृष्णा के वश होकर दौड़ता रहता है इसी तरह तुम विषयों में सुख मानकर आत्मा को भूल गये। तुमने भगवान का भजन किए बिना ही जीवन को बर्बाद कर लिया ॥3॥

9

अहो ! यह उपदेश मांही

अहो ! यह उपदेश मांही, खूब चित्त लगावना ।
होयगा कल्याण, सुख अनन्त बढ़ावना ।।टेक॥
रहित दूषण, विश्व भूषण देव, जिनपति ध्यावना ।
गगनवत् निर्मल अचल मुनि, तिनहिं शीश नवावना ।।1॥
अहो यह उपदेश.....

धर्म अनुकम्पा प्रधान, न कोई जीव सतावना ।
सप्त तत्त्व परीक्षा करि, हृदय श्रद्धा लावना ।।2॥
अहो यह उपदेश....

पुद्गलादिक ते पृथक्, चैतन्य ब्रह्म लखावना ।
या विधि विमल सम्यक्त्व धरि शंकादि पंक बहावना ।।3॥
अहो यह उपदेश....

रुचैं भव्यनि को वचन जे, शठन को न सुहावना ।
चन्द्र लखि जिमि कुमुद विकसै, उपल नहिं विकसावना ।।4॥
अहो यह उपदेश....

'भागचन्द' विभाव तजि, अनुभव स्वभावित भावना ।
या बिन शरण न अन्य, जगतारण्य में कहुं पावना ।।5॥
अहो यह उपदेश.....

अहो आत्मन! तुम भगवान की वाणी सुनने में बहुत मन लगाना, इसी से ही तुम्हारा कल्याण होगा और अनंत सुख की प्राप्ति होगी॥टेक॥

हे आत्मन् ! जो दोषों से रहित हैं, संपूर्ण विश्व के आभूषण के समान हैं – ऐसे जिनदेव का ही ध्यान करना और जो आकाश के समान निर्मल हैं, अचल हैं – ऐसे मुनिराजों को ही नमस्कार करना ॥1॥

हे चेतनराम! जैन धर्म दया की प्रधानता वाला है। कभी भी किसी जीव को दुखी मत करना और सात तत्वों की परीक्षा करके, उसमें अंतरंग से श्रद्धा करना ॥2॥

हे आत्मन्! तुम पुदगल द्रव्यों से भिन्न अपने चैतन्य आत्मा का दर्शन करना और इस विधि से निर्मल सम्यग्दर्शन को धारणकर, शंका आदि मल का परिष्कार करना ॥3॥

हे चेतन! जिस प्रकार चंद्रमा को देखकर कमल खिल जाता है परंतु पत्थर नहीं खिलता उसी प्रकार भगवान जिनेंद्र देव की वाणी भव्य जीवों को ही पसंद आती है, यह दुर्जनों को पसंद नहीं आती ॥4॥

कविवर भागचंद जी कहते हैं कि हे चेतन! तुम विभाव का त्याग करना और अपने चैतन्य आत्मा का अनुभव करना। अपनी आत्मा की शरण प्राप्त किए बिना संसार रूपी वन में कोई सहायक नहीं है ॥5॥

10

असंख्यात प्रदेश जाके

असंख्यात प्रदेश जाके, ज्ञान दरस अनन्त ।
सुख अनन्त अनन्त वीरज, शुद्ध सिद्ध महन्त ।। रे जिय. ।।1 ।।

अमल अचलातुल अनाकुल, अमन अवच अदेह ।
अजर अमर अखय अभय प्रभु, रहित-विकलप नेह ।। रे जिय. ।।2 ।।

क्रोध मद बल लोभ न्यारो, बंध मोख विहीन ।
राग दोष विमोह नाहीं, चेतना गुणलीन ।। रे जिय. ।।3 ।।

वरण रस सुर गंध सपरस, नाहिं जामें होय ।
लिंग मारगना नहीं, गुणथान नाहीं कोय ।। रे जिय. ।।4 ।।

ज्ञान दर्शन चरनरूपी, भेद सो व्योहार ।
करम करना क्रिया निहचै, सो अभेद विचार ।। रे जिय. ।।5 ।।

आप जाने आप करके, आपमाहीं आप।
यही ब्योरा मिट गया तब, कहा पुन्यरु पाप ।। रे जिय. ।।6 ।।

है कहै है नहीं नाहीं, स्याद्वाद प्रमान ।
शुद्ध अनुभव समय 'द्यानत', करौ अमृतपान ।। रे जिय. ।।7 ।।

हे मन ! सिद्ध भगवान के असंख्यात प्रदेश हैं और उनमें अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख और अनंत वीर्य प्रकट हो गये हैं, वे पुर्ण शुद्धता को प्राप्त महान आत्मा हैं ॥1॥

हे आत्मन्! सिद्ध भगवान मल से रहित हैं, चलायमान नहीं हैं, उपमा आदि से रहित हैं, आकुलता रहित हैं। उनका मन नहीं है, उनकी वाणी नहीं है, उनका शरीर नहीं है, वह जन्म – मरण से रहित अक्षय पद को प्राप्त हुए हैं। वे भय से रहित हैं और वे विकल्प और स्नेह, राग से भी रहित हो गए हैं ॥2॥

हे चेतन! सिद्ध भगवान क्रोध, मान, माया, लोभ से रहित हो गए हैं। वे बंध और मोक्ष से भी रहित हैं। उनके राग – द्वेष मोह नहीं है। वे अपनी आत्मा में लीन हो गए हैं ॥*॥

हे आत्मन्! सिद्ध भगवान के स्पर्श, रस, गंध, वर्ण नहीं है। उनमें लिंग मार्गणा, गुणस्थान आदि भी नहीं हैं ॥4॥

हे मन! सिद्ध भगवान के सम्यक्–दर्शन, सम्यक्–ज्ञान सम्यक्–चारित्र के भेद कहे गए हैं उन्हें व्यवहार से जानना। वहाँ पर न कर्म हैं, न क्रिया है ऐसा अभेद रूप से विचार करना ॥5॥

हे चेतन! सिद्ध भगवान स्वयं के द्वारा, स्वयं में ही, स्वयं को जानते हैं। उनके अंदर सारे विकल्प समाप्त हो गए हैं तो पुण्य और पाप की तो बात ही क्या? ॥6॥

कवि द्यानतरायजी कहते हैं कि हे चेतन! हमने जितना भी वर्णन किया है वह सब स्याद्वाद शैली से समझना। अपनी आत्मा के अनुभव के समय कोई विकल्प नहीं होता; इस तरह अमृत पान करना ॥7॥